

एस. एम. करीम

बनाम

मुसम्मात बीबी सकीना

(एम. हिदायतुल्ला एवं रघुबर दयाल, न्यायमूर्तिगण)

बेनामी लेनदेन— धारा 66 के तहत संरक्षण—क्या अंतरिती को उपलब्ध है—उप-धारा (2) लेनदारों पर लागू होती है—प्रतिकूल कब्जे के लिए वाद, क्या विचारणीय है— दीवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का अधिनियम 5), धारा 66।

अपीलकर्ता ट ने कुछ संपत्ति पर यह आरोप लगाते हुए दावा किया कि उसने इसे एक व्यक्ति क से खरीदा था, जिसने इसे एक व्यक्ति ट के नाम पर बेनामी खरीदा था, और ट ने बदले में इसे उत्तरदाता ध को बेच दिया था।

अभिनिर्धारित : (i) दीवानी प्रक्रिया संहिता की धारा 66 द्वारा उपलब्ध संरक्षण न केवल प्रमाणित खरीदार के विरुद्ध है, बल्कि उसके माध्यम से दावा करने वाले किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध भी है और धारा 66 दावे को वर्जित करती है।

दूसरी उप-धारा लेनदारों के दावों को संदर्भित करती है न कि अंतरितियों के, जिनका विवरण पहली उप-धारा में दिया गया है।

(ii) यदि वास्तविक स्वामी का कब्जा परिसीमा अधिनियम के तहत स्वामित्व में परिपक्व हो जाता है और उसे बेदखल कर दिया जाता है, तो वह कब्जा प्राप्त करने के लिए मुकदमा कर सकता है, क्योंकि तब वह लेनदेन की बेनामी प्रकृति पर भरोसा नहीं करता है। लेकिन वैकल्पिक दावे को स्पष्ट रूप से किया जाना और सिद्ध किया जाना चाहिए। प्रतिकूल कब्जा निरंतरता, प्रचार और सीमा में पर्याप्त होना चाहिए और कम से कम यह दिखाने के लिए एक दलील आवश्यक है कि कब्जा कब प्रतिकूल हो गया ताकि प्रभावित पक्ष के विरुद्ध परिसीमा का प्रारंभिक बिंदु पाया जा सके।

सुकन बनाम कृष्णानंद, आई.एल.आर. 32 पटना. 352, श्री भगवान सिंह बनाम राम बसी

कुरर, ए.आई.आर. 1957 पटना 157 और *बिथुन दयाल बनाम केशो प्रसाद*, ए.आई.आर., 1940 पी. सी. 202, का संदर्भ दिया गया।

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: 1962 की दीवानी अपील संख्या 647।

अपील से 1957 की अपीलीय डिक्री संख्या 642 में पटना उच्च न्यायालय के 3 दिसंबर, 1959 के निर्णय और डिक्री के विरुद्ध विशेष अनुमति द्वारा अपील।

*एस. पी. वर्मा, अपीलकर्ता के लिए।*

*एस. पी. सिन्हा, शहजादी मोहिउद्दीन और शौकत हुसैन, उत्तरदाता के लिए।*

14 फरवरी, 1964। न्यायालय का निर्णय सुनाया गया।

हिदायतुल्ला, न्यायमूर्ति।— यह अपील पटना उच्च न्यायालय के उस निर्णय के विरुद्ध विशेष अनुमति द्वारा की गई है, जिसने नीचे की दो अदालतों के समवर्ती निर्णयों को उलट दिया था और अपीलकर्ता के वाद को खारिज करने का आदेश दिया था। अपीलकर्ता सैयद एम. करीम, सैयद औलाद अली का पुत्र है और उत्तरदाता मुसम्मात बीबी सकीना (प्रतिवादी संख्या 11) सैयद औलाद अली के दामाद फकीर आलम (प्रतिवादी संख्या 2) से विवादित संपत्तियों की अंतरिती है। अपीलकर्ता, अपनी ओर से, उन्हीं संपत्तियों का अपने पिता सैयद औलाद अली से अंतरिती है।

यह वाद कई प्रतिवादियों के विरुद्ध इस संपत्ति और अन्य संपत्तियों के संबंध में स्वामित्व की घोषणा और कब्जे की पुष्टि, या विकल्प के रूप में कब्जे की प्राप्ति के लिए लाया गया था। इस अपील में हमारा सरोकार अन्य प्रतिवादियों या अन्य संपत्तियों से नहीं है। अपीलकर्ता के वाद का यह हिस्सा इस आरोप पर आधारित था कि सैयद औलाद अली ने 28 मई, 1914 को एक अदालती बिक्री में, अपने दामाद हाकिर आलम के नाम पर *बेनामी* रूप से वाद संपत्तियां खरीदी थीं। *बेनामी* खरीद का कारण यह था कि दरभंगा राज के नियमों के तहत, जहाँ सैयद औलाद अली कार्यरत थे, कुछ पदों पर सेवा देने वाले व्यक्तियों को अदालती बिक्री में खरीदारी करने से प्रतिबंधित किया गया था। बिक्री प्रमाण पत्र हाकिर

आलम के नाम पर जारी किया गया था, जो उस समय सैयद औलाद अली के साथ रह रहा था। 6 जनवरी, 1950 को सैयद औलाद अली ने यह संपत्ति अपने पुत्र को बेच दी, और हाकिर आलम ने भी अपनी ओर से यह संपत्ति बीबी सकीना को बेच दी; जिसके बाद उपरोक्त राहतों के लिए यह वर्तमान वाद दायर किया गया।

इस अपील में, अपीलकर्ता द्वारा इस बात पर जोर दिया गया है कि निष्कर्ष स्पष्ट रूप से 1914 के लेनदेन की *बेनामी* प्रकृति को स्थापित करते हैं। यह शायद सच है, लेकिन अपीलकर्ता इसका लाभ नहीं उठा सकता। लेनदेन की *बेनामी* प्रकृति पर आधारित अपीलकर्ता का दावा टिक नहीं सकता क्योंकि दीवानी प्रक्रिया संहिता की धारा 66 इसे बाधित करती है। वह धारा यह प्रावधान करती है कि न्यायालय द्वारा प्रमाणित खरीद के तहत शीर्षक का दावा करने वाले किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध इस आधार पर कोई वाद नहीं चलाया जाएगा कि वह खरीद वादी की ओर से या किसी ऐसे व्यक्ति की ओर से की गई थी जिसके माध्यम से वादी दावा करता है। पूर्व में, इसके शुरुआती शब्द थे, प्रमाणित खरीदार के विरुद्ध कोई वाद नहीं चलाया जाएगा, और यह परिवर्तन न केवल प्रमाणित खरीदार बल्कि न्यायालय द्वारा प्रमाणित खरीद के तहत शीर्षक का दावा करने वाले किसी भी व्यक्ति की रक्षा के लिए किया गया था। इस प्रकार यह सुरक्षा न केवल वास्तविक खरीदार के विरुद्ध, बल्कि उसके माध्यम से दावा करने वाले किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध उपलब्ध है। वर्तमान मामले में, वादी के रूप में अपीलकर्ता इस धारा की चपेट में आता है और प्रतिवादी इसके द्वारा संरक्षित थे।

यह तर्क दिया गया है कि यह मामला दूसरी उप-धारा के अंतर्गत आता है, जिसके तहत एक तीसरे व्यक्ति के इशारे पर वाद संभव है जो संपत्ति के विरुद्ध कार्यवाही करना चाहता है, भले ही वह संपत्ति प्रत्यक्ष रूप से प्रमाणित खरीदार को बेची गई हो, इस आधार पर कि वह संपत्ति वास्तविक मालिक के विरुद्ध ऐसे तीसरे व्यक्ति के दावे को संतुष्ट करने के लिए उत्तरदायी है। सैयद औलाद अली द्वारा अपीलकर्ता के पक्ष में किए गए हस्तांतरण पर भरोसा जताया गया है, जिसे वास्तविक मालिक के विरुद्ध हस्तांतरिती के दावे के रूप में

वर्णित किया गया है। दूसरी उप-धारा के शब्द लेनदारों के दावे को संदर्भित करते हैं, न कि हस्तांतरितियों के दावों को। हस्तांतरितियों के मामले पहली उप-धारा में निपटाए गए हैं, और यदि अपीलकर्ता द्वारा दूसरी उप-धारा पर चाहा गया अर्थ स्वीकार कर लिया जाता है, तो वास्तविक खरीदार द्वारा किसी अन्य को हस्तांतरण कर देने से कानून की पूरी नीति ही विफल हो जाएगी और पहली उप-धारा लगभग एक मृत कानून बनकर रह जाएगी। हमारी राय में, ऐसी व्याख्या स्वीकार नहीं की जा सकती और वादी के वाद को संहिता की धारा 66 के तहत बाधित माना जाना चाहिए।

एक विकल्प के रूप में, हमारे समक्ष यह तर्क दिया गया था कि सैयद औलाद अली और उनके बाद वादी के लंबे और निर्बाध प्रतिकूल कब्जे के कारण हाकिर आलम का स्वत्व समाप्त हो गया था। उच्च न्यायालय ने इस मामले को स्वीकार नहीं किया। निश्चित रूप से, यदि वादी के कब्जे में बाधा डाली जाती है, तो उसके लिए ऐसा मामला बनाने का विकल्प खुला है। यदि वास्तविक स्वामी का कब्जा परिसीमा अधिनियम के तहत शीर्षक में बदल जाता है और उसे बेदखल कर दिया जाता है, तो वह कब्जा प्राप्त करने के लिए वाद दायर कर सकता है, क्योंकि तब वह लेनदेन की बेनामी प्रकृति पर भरोसा नहीं करता है। लेकिन वैकल्पिक दावे को स्पष्ट रूप से किया जाना और सिद्ध किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय ने यह माना कि वाद में प्रतिकूल कब्जे का तर्क नहीं उठाया गया था और निचली दोनों अदालतों के निर्णय को उलट दिया। यहाँ प्रतिकूल कब्जे का तर्क उठाया गया है। हमारे समक्ष *सुकन बनाम कृष्णानंद* और *श्री भगवान सिंह एवं अन्य बनाम राम बसी और अन्य* के मामलों पर यह प्रस्तुत करने के लिए भरोसा जताया गया है कि ऐसा तर्क आवश्यक नहीं है, और वैकल्पिक रूप से, यदि तर्क की आवश्यकता है, तो किसे उचित तर्क माना जा सकता है। लेकिन ये दो मामले अपीलकर्ता की शायद ही कोई मदद कर सकें। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वाद-पत्र में इस तथ्य का उल्लेख है कि सैयद औलाद अली द्वारा अपने दामाद हाकिर आलम के नाम पर *बेनामी* खरीद के बाद, औलाद अली संपत्ति के कब्जे में बने रहे, लेकिन

यह नहीं कहा गया है कि यह कब्जा किसी भी समय प्रमाणित खरीदार के विरुद्ध प्रतिकूल था। हाकिर आलम, सैयद औलाद अली का दामाद था और उनके साथ रह रहा था। ऐसा कोई सुझाव नहीं है कि सैयद औलाद अली ने कभी उसके विरुद्ध किसी शत्रुतापूर्ण शीर्षक का दावा किया हो या स्वामित्व और कब्जे के संबंध में कभी कोई विवाद उत्पन्न हुआ हो। प्रतिकूल कब्जा निरंतरता, निरंतर प्रचार और विस्तार में पर्याप्त होना चाहिए और कम से कम यह दिखाने के लिए एक तर्क की आवश्यकता होती है कि कब्जा कब प्रतिकूल हो गया, ताकि प्रभावित पक्ष के विरुद्ध परिसीमा की शुरुआत का बिंदु पाया जा सके। यहाँ इस बात का कोई साक्ष्य नहीं है कि कब्जा कब प्रतिकूल हुआ, यदि वह हुआ भी था, और राहत खंड में केवल यह सुझाव देना कि "कई 12 वर्षों" तक निर्बाध कब्जा था या वादी ने "पूर्ण स्वत्व" प्राप्त कर लिया था, ऐसा तर्क उठाने के लिए पर्याप्त नहीं था। लंबा कब्जा अनिवार्य रूप से प्रतिकूल कब्जा नहीं होता है और प्रार्थना खंड किसी कानूनी तर्क का विकल्प नहीं है। उद्धृत मामलों पर विचार करने की शायद ही आवश्यकता है, क्योंकि प्रत्येक मामले का निर्धारण उस मामले के वाद-पत्र के आरोपों के आधार पर किया जाना चाहिए। यह इंगित करना पर्याप्त है कि *बिशुन दयाल बनाम केशो प्रसाद और अन्य* [ए.आई.आर. 1940 पी. सी. 202] में, न्यायिक समिति ने उचित तर्क के बिना खरीद के बाद कब्जे पर आधारित वैकल्पिक मामले को स्वीकार नहीं किया था।

संपूर्ण वाद-पत्र को पढ़ने पर, हम उच्च न्यायालय से सहमत हैं कि खरीद के बाद कब्जे पर आधारित मामला वाद-पत्र में नहीं बताया गया था और इसलिए इस मामले की परिस्थितियों में उच्च न्यायालय का निर्णय उचित था। अपील विफल होती है और लागत के साथ खारिज की जाती है।

*अपील खारिज।*

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।